इकाई 1 अर्थशास्त्र एवं अर्थव्यवस्था का परिचय

संरचना

1.0 उद्देश्य

1.1 विषय प्रवेश

1.2 दुर्लभता की अवधारणा

1.3 उत्पादन का अर्थ

1.4 अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएँ

1.4.1 क्या उत्पादन किया जाए?

1.4.2 कैसे उत्पादन किया जाए?

1.4.3 किसके लिए उत्पादन किया जाए?

1.4.4 संवृद्धि की समस्या

1.4.5 सार्वजनिक एवं निजी वस्तुओं के बीच चयन

1.4.6 विशेष गुण वस्तुओं के उत्पादन की समस्या

1.5 उत्पादन संभावना वक्र

1.6 संसाधनों का आवंटन : केंद्रीय समस्याओं का समाधान

1.6.1 मिश्रित अर्थव्यवस्था में संसाधनों का आवंटन

1.7 आर्थिक कार्यप्रणाली एवं आर्थिक नियम

1.7.1 आगमनात्मक एवं निगमनात्मक तर्क

1.7.2 संतुलन

1.8 यथार्थमूलक बनाम आदर्शमूलक अर्थशास्त्र

1.9 व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र

1.10 स्टॉक (भण्डार) एवं प्रवाह

1.11 स्थैतिकी एवं गत्यात्मकता

1.12 सार-संक्षेप

1.13 संदर्भ ग्रंथादि

1.14 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

1.15 पाठांत प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप सक्षम होंगे कि :

- समाज की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए संसाधनों की दुर्लभता की समस्या का समाधान कर पाएं;
- अर्थव्यवस्था का अर्थ एवं प्रकृति बता पाएं;
- आर्थिक इकाइयों की अवधारणा का वर्णन कर पाएं;

- उत्पादन संभावना वक्र की अवधारणा पर चर्चा कर पाएं;
- निवेश और उपभोग के बीच संसाधनों के आवंटन और निजी एवं सार्वजनिक वस्तुओं से जुड़े मुद्दे स्पष्ट कर पाएं;
- बाज़ार अर्थव्यवस्था, समाजवादी अर्थव्यवस्था और मिश्रित अर्थव्यवस्था में संसाधन आवंटन के तरीकों की व्याख्या कर पाएं;
- मूलभूत अवधारणाओं और अर्थशास्त्र की कार्यप्रणाली का वर्णन स्पष्ट रूप से कर पाएं;
- आर्थिक नियमों की प्रकृति का विवरण दे पाएं; और
- आर्थिक तर्क के साथ जुड़ी कुछ विश्लेषणात्मक अवधारणाओं को समझा पाएं।

1.1 विषय प्रवेश

हम अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु को परिभाषित करने के साथ अपनी चर्चा शुरू करते हैं।

अर्थशास्त्र की परिभाषा

अर्थशास्त्र को विभिन्न रूप से परिभाषित किया गया है। सैमुएलसन के अनुसार संक्षेप में, अर्थशास्त्र :

- विश्लेषण करता है कि एक समाज की संस्थाएं और प्रौद्योगिकी कीमतों और विभिन्न उपयोगों के बीच संसाधनों के आवंटन को कैसे प्रभावित करती हैं।
- ब्याज दरों और शेयरों की कीमतों सहित वित्तीय बाज़ारों के व्यवहार की पड़ताल करता है।
- आय के वितरण की जाँच करता है और ऐसे तरीके सुझाता है कि गरीबों को अर्थव्यवस्था के प्रदर्शन को नुकसान पहुंचाएं बिना मदद मिल सके।
- व्यापार चक्र का अध्ययन करता और यह जांचता है कि बेरोज़गारी और मुद्रास्फीति में उच्चावचन को नियंत्रित करने के लिए मौद्रिक नीति का उपयोग कैसे किया जा सकता है
- देशों के बीच व्यापार के स्वरूप का अध्ययन और व्यापार अवरोधों के प्रभाव का विश्लेषण करता है
- विकासशील देशों में संवृद्धि को देखते हुए संसाधनों के कुशल उपयोग को प्रोत्साहित करने के तरीकों का प्रस्ताव करता है।
- यह पूछता है कि तेज़ी से आर्थिक विकास, संसाधनों का कुशल उपयोग, पूर्ण रोज़गार, कीमत स्थिरता और आय का उचित वितरण आदि के लिए निर्मित सरकारी नीतियों का इस्तेमाल कैसे किया जा सकता है।

इन सभी परिभाषाओं से एक सांझा विचार चल रहा है कि दुर्लभता जीवन की एक वास्तविकता है और इन दुर्लभ संसाधनों का कुशल उपयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार हम अर्थशास्त्र को एक विज्ञान के रूप में परिभाषित करते हैं जो दुर्लभता से संबंधित है।

इस प्रकार अर्थशास्त्र दुर्लभता की समस्या का सामना कर रही विभिन्न आर्थिक इकाइयों, परिवारों, फर्मों, सरकारों और अर्थव्यवस्था के व्यवहार को पूरी तरह समझाता है।

1.2 दुर्लभता की अवधारणा

दुर्लभता सभी आर्थिक गतिविधियों का मूल कारक है। दुर्लभता की अवधारणा आर्थिक जीवन के दो बुनियादी तथ्यों में यह अभिव्यक्ति पाती है :

क) असीमित आवश्यकताएं या ध्येय

ख) दुर्लभ या सीमित संसाधन

क) असीमित आवश्यकताएं या ध्येय

हर व्यक्ति की कुछ इच्छाएं/आवश्यकताएं होती हैं। प्रायः व्यक्तियों की आवश्यकताओं में अंतर होते हैं। यहां तक कि समय, स्थान और स्थिति में परिवर्तन के साथ ही एक व्यक्ति की आवश्यकताएं भी बदल जाती हैं।

मानव की आवश्यकताएं असीमित होती हैं और उनमें निरंतर वृद्धि होती रहती है। विभिन्न आवश्यकताओं की गहनता में अंतर होते हैं। संसाधनों की सीमित उपलब्धता के कारण ही पहले उच्च वरीयता क्रम की (अर्थात् अधिक गहनतापूर्ण) आवश्यकताओं को पूरा करने के प्रयास होते हैं। उसके बाद भी कुछ संसाधन उपलब्ध होने पर निम्न क्रम की इच्छाओं की पूर्ति की ओर ध्यान दिया जा सकता है।

ख) दुर्लभ या सीमित संसाधन

आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए उन्हें पूरा करने के संसाधनों की ज़रूरत पड़ती है। किंतु आवश्यकताओं की तुलना में संसाधनों की उपलब्धता सीमित रहती है।

किंतु एक सुखद पक्ष भी है : दुर्लभ संसाधनों को वैकल्पिक रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

अतः संसाधनों को विभिन्न प्रयोजनों के बीच एक व्यवस्थित एवं समन्वित रूप से आवंटित किया जाना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति और अर्थव्यवस्था (या समाज) को इस आवंटन की एक प्रक्रिया विकसित करनी होती है।

विभिन्न समाज इन मुद्दों को अलग-अलग तरीकों से सुलझाने की कोशिश करते हैं और इसी प्रक्रिया में समाज जिस ताने-बाने को बुन लेता है, उसे हम एक अर्थव्यवस्था कहते हैं। यह अर्थव्यवस्था एक सार गर्भित विचार है। इसमें संसाधनों और आवश्यकताओं के बीच असंतुलन की मौलिक और स्थायी समस्या के समाधान के लिए गढ़ी गयी संस्थाओं, उनके तंत्रों (तथा उनके बीच अंतर्संबंधों की रचना/नियमन करने वाले नियम-विनियम) को हम एक शब्द 'अर्थव्यवस्था' में ही समाहित मान लेते हैं।

मानव ने ऐसी संस्थागत व्यवस्थाओं के कई प्रकार भेद विकसित किए हैं और उन सबके अपने-अपने विशिष्ट लक्षण एवं नाम भी हैं। प्रत्येक व्यवस्था अपने ही ढंग से मौलिक समस्याओं के समाधान की विधियां और प्रविधियां अपनाती है।

एक पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का उदाहरण लें। यहां उत्पादन के साधनों पर निजी व्यक्तियों का अधिकार और उत्तराधिकार होता है। विभिन्न आर्थिक निर्णय बाज़ार में वस्तुओं और सेवाओं की बाज़ार कीमतों से प्रेरित होते हैं। व्यक्ति की आय उस द्वारा बाज़ार को प्रदान साधन सेवाओं तथा वहां से प्राप्त उनकी कीमतों पर निर्भर करती है। किंतु, दूसरी ओर एक सटीक रूप से समाजवादी व्यवस्था में सभी उत्पादक साधनों पर सरकार का ही स्वामित्व रहता है। सरकार ही सभी संसाधनों के प्रयोग विषयक निर्णय लेती है।

किंतु एक बात स्पष्ट है– अर्थव्यवस्था की रचना कैसी भी हो, उसे संसाधनों की दुर्लभता और विविधतापूर्ण एवं संवर्धनशील आवश्यकताओं के बीच तालमेल बैठाने की

समस्या को अवश्य सुलझाना पड़ता है। संसाधनों और आवश्यकताओं के संयोजन कई प्रकार किए जा सकते हैं। अर्थव्यवस्था के विकास का स्तर कुछ भी हो, सभी को दुलर्भता की समस्या का सामना अवश्यक करना पड़ता है। अतः उसे दो प्रश्नों पर ध्यान देना पड़ता है :

1) आवश्यकता संतुष्टि के साधनों की उपलब्धता बढ़ाना; और

2) आवश्यकताओं की संतुष्टि का अनुक्रम तैयार करना।

बोध प्रश्न 1

1) आवश्यकताओं के वे दो महत्त्वपूर्ण लक्षण बताइए जो उनकी संख्या को ''अनन्त'' स्वरूप प्रदान कर देते हैं।

....

....

....

2) एक अर्थव्यवस्था किसे कहते हैं?

....

....

....

3) सही विकल्प का चुनाव करें :

इनमें से किसे 'दुर्लभ' कहा जा सकता है–

क) सड़ी हुई सब्ज़ियों का भंडार

ख) जंगल में निरोपयोगी पौधे

ग) किसी नर्सरी (पौधशाला) में फूलों की संख्या

घ) किसी गंदे कूप में पानी।

1.3 उत्पादन का अर्थ

'उत्पादन' प्रक्रिया का अर्थ विभिन्न आगतों के उस परावर्तन और परिवर्तन से है जो उनकी आवश्यकता संतुष्ट करने की क्षमता में वृद्धि कर देते हों। अतः यह प्रक्रिया प्रकृति द्वारा प्रदान की गई चीज़ों को मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि करने वाली वस्तुओं और सेवाओं में परिवर्तित कर देती है। उन प्रयुक्त चीज़ों को आगत कहते हैं और उनके परिवर्तित/परिमार्जित स्वरूप ही उत्पादन अर्थात् वस्तुएं और सेवाएं हैं। इस कार्य में कुछ शारीरिक और बौद्धिक मानवीय प्रयास की जरूरत होती है। यह परिवर्तन/परिमार्जन भौतिक (आकार-स्वरूप का बदलाव, जिससे संतुष्टि प्रदान करने की क्षमता में सुधार आता है), स्थानिक (किसी दूसरे स्थान पर प्रयोक्ताओं को वह चीज़ें उपलब्ध कराना); या फिर सामयिक (किसी अन्य समय बिंदु पर आज की पैदा हुई चीज़ें सुलभ कराना– यह भंडारण और संरक्षण द्वारा होता है)। यदि किसी वस्तु की आवश्यकता तुष्टि की क्षमता उसमें लगी आगतों की अपेक्षा अधिक हो तो वह वस्तु अवश्य उत्पादन की किसी प्रक्रिया से गुजर कर आयी है। अन्य शब्दों में 'उत्पादन' उपयोगिता वृद्धि का ही दूसरा नाम है।

1.4 अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं

संसाधनों की दुर्लभता के कारण सभी अर्थव्यवस्थाओं के समक्ष कुछ आधारभूत समस्याएं आती हैं। उन्हें अपनी-अपनी सामाजिक आर्थिक रचनाओं की परिधियों में उनका समाधान तलाश करना होता है। ये केंद्रीय समस्याएं हैं :

1.4.1 क्या उत्पादन किया जाए?

किसी भी अर्थव्यवस्था के पास सभी आवश्यक चीजों का उत्पादन करने के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं होते। अतः इसे यह निर्णय करना ही पड़ता है कि क्या उत्पादन करे और क्या नहीं करें। कुछ वस्तुओं का उत्पादन नहीं होने का अर्थ है समाज की उन वस्तुओं को पाने की इच्छा अपूर्ण रह जाएगी। इस प्रकार किन आवश्यकताओं की संतुष्टि की जानी है और किन वस्तुओं-सेवाओं का उत्पादन किया जाना है– ये सभी निर्णय परस्पर संबंधित रहते हैं और इन्हें समन्वित रूप से ही लिया जाता है। इसी को हम संसाधनों का आवंटन कहते हैं। यदि कुछ संसाधन वस्तु X के उत्पादन में लगा दिए जाते हैं तो उनका वह परिमाण निश्चित रूप से Y के उत्पादन के लिए उपलब्ध नहीं रहेगा। ऐसी समस्याओं को हम उत्पादन संभावना वक्र के विचार द्वारा सहज ही समझ सकते हैं। उस अवधारणा पर हम भाग 1.5 में विस्तार से चर्चा करेंगे।

1.4.2 कैसे उत्पादन किया जाए?

यह उत्पादक संसाधनों के विभिन्न वस्तुओं/सेवाओं के उत्पादन के लिए आवंटन की ही समस्या है। अधिक सटीक रूप से, जब अर्थव्यवस्था वस्तु X के उत्पादन का निर्णय लेती है तो उसे यह भी निर्धारित करना होगा कि इसके उत्पादन में कितनी भूमि, कितनी पूँजी और कितने श्रम आदि को लगाया जाएगा। अर्थव्यवस्था के आकार और स्वरूप कुछ भी हों, प्रत्येक उद्योग में विभिन्न संसाधनों के सटीक अनुपातों का निर्धारण करना आवश्यक होता है। यह अनुपात ही उक्त वस्तु के उत्पादन की एक तकनीक कहलाता है। ऐसे पदार्थ हैं जिनके उत्पादन में पूँजी की अपेक्षा श्रम का अधिक प्रयोग होता है। ऐसी उत्पादन तकनीक को हम ''श्रम गहन'' या ''श्रम बहुल'' तकनीक कहते हैं। दूसरी ओर, यदि उत्पादन में पूँजी का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक होता है तो वह पूँजी गहन तकनीक के प्रयोग का उदाहरण होगा।

किसी वस्तु के उत्पादन की तकनीक के चयन के समय उत्पादक को वैकल्पिक आदानों की कीमतों और उत्पादिता पर विचार करना होगा। आमतौर पर वह श्रम और पूँजी के कई संयोजनों का प्रयोग कर सकता है। वह ऐसे संसाधन संयोजन का चुनाव करता है जिसकी लागत न्यूनतम हो और जो उसे अधिकतम उत्पाद प्रदान कर सके।

उसके यह निर्णय इन दो बातों पर निर्भर है :

i) श्रम और पूँजी की सापेक्ष कीमतें; और

ii) इन दो आदानों की सापेक्ष उत्पादन दक्षता।

1.4.3 किसके लिए उत्पादन किया जाए?

समाज में परिवारों एवं व्यक्तियों की बहुत विशाल जनसंख्या होती है। उपभोग्य वस्तुओं और सेवाओं का सारा उत्पादन केवल उन्हीं की आवश्यकताएं पूरी करने के उद्देश्य से किया जाता है। अतः सभी वस्तुएं/सेवाएं उन व्यक्तियों-परिवारों के बीच विभाजित की जानी हैं। यहां समस्या यही है कि प्रत्येक व्यक्ति/परिवार को उन वस्तुओं और सेवाओं की कितनी-कितनी मात्राएं दी जानी चाहिए।

हम इस आवंटन-वितरण के लिए कई प्रकार के सिद्धांतों का प्रयोग कर सकते हैं। यदि अर्थव्यवस्था का गठन बाज़ार के नियमों के अनुरूप किया गया है तो समाज के सदस्यों के आय अंशों का निर्धारण इस प्रकार किया जाता है :

ऐसी व्यवस्था में सभी संसाधनों पर किसी न किसी व्यक्ति या परिवार का अधिकार होता है। उन संसाधनों की भी किसी सामान्य वस्तु की भांति बिक्री हो सकती है– या उन्हें भाड़े पर लिया जा सकता है। प्रत्येक उत्पादक संसाधन की कीमत का निर्धारण बाज़ार में उसकी मांग और आपूर्ति द्वारा होता है। इसका प्रयोग करने के इच्छुक वस्तु उत्पादक को इसकी कीमत इसके स्वामी को चुकानी पड़ती है। वह संसाधन स्वामी उसकी बाज़ार में आपूर्ति करने या उसे अपने भंडार में ही रखने को स्वतंत्र होता है। इस प्रकार समाज में प्रत्येक व्यक्ति की आय इस बात पर निर्भर करेगी कि वह अपने विभिन्न संसाधनों की कितनी मात्राओं की और किन कीमतों पर बाज़ार में आपूर्ति करता है।

1.4.4 संवृद्धि की समस्या

प्रत्येक अर्थव्यवस्था अधिक आय का सृजन करने के लक्ष्य से अपने पूँजी भंडार को संवर्धित करना चाहती है (क्योंकि यह पूँजी भंडार उसकी 'उत्पादन क्षमता' दर्शाता है)। समाज अपनी सृजित आय के दो प्रयोग कर सकता है : उपभोग (C) तथा बचत (S)। अतः $Y = C + S$ । यह बचत ही समाज में पूँजी के भंडार को बढ़ाने वाले निवेश के लिए वित्त का स्रोत होती है। अतः समस्त आय में से उपभोग के स्तर को सीमित करते हुए बचत के अंश की वृद्धि पर बल दिया जाता है। यह पूँजी निर्माण में सहायक रहता है।

1.4.5 सार्वजनिक एवं निजी वस्तुओं के बीच चयन

1) **निजी पदार्थ** : कुछ ऐसे पदार्थ (वस्तुएं और सेवाएं) होते हैं जिनकी सुलभता को कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित रखा जा सकता है। उदाहरण, जो व्यक्ति किसी वस्तु की बाज़ार कीमत चुकाने को तैयार हो, वही उसे पाने का अधिकारी होता है। वस्तु की ऐसी विशेषता, जिसके आधार पर किन्हीं व्यक्तियों को उसके प्रयोग से वर्जित किया जा सकता है, **'बहिष्कृति का नियम'** कहलाती है। अतः जो व्यक्ति वस्तु की कीमत नहीं चुकाना चाहते अथवा नहीं चुका पाते, वे उसके उपभोग/उपयोग से वंचित रह जाते हैं। अतः वस्तु का प्रयोग विभिन्न व्यक्तियों के बीच विभाजित रहता है। कोई भी ऐसी वस्तु जिसकी कीमत निर्धारित हो सकती हो तथा जिसका प्रयोग किन्हीं चुने हुए व्यक्तियों तक सीमित रखा जा सके **निजी पदार्थ** कहलाती है।

2) **सार्वजनिक पदार्थ** : जिन पदार्थों/वस्तुओं की उपलब्धता को चुने हुए व्यक्तियों तक सीमित रख पाना संभव नहीं रहता उन्हें सार्वजनिक या सामाजिक पदार्थ कहा जाता है। इनकी कीमत इतनी नहीं रखी जा सकती कि कुछ व्यक्ति उनके प्रयोग से पूरी तरह वंचित रह जाएं। इस प्रकार इन वस्तुओं में **अविभाज्यता का गुण** आ जाता है। ऐसी सार्वजनिक/सर्वजन सहाय/सेवा का एक अच्छा उदाहरण तो सुरक्षा सेवाएं ही हैं। जब विदेशी आक्रमण से किसी देश की रक्षा की जाती है तो वास्तव में प्रत्येक देशवासी को सुरक्षा प्राप्त होती है।

सीमित संसाधनों वाली अर्थव्यवस्था सभी निजी एवं सार्वजनिक पदार्थों का पर्याप्त परिमाण में उत्पादन नहीं कर सकती। इसे इनके किसी 'अभीष्ट' संयोजन के उत्पादन का प्रयास अवश्य करना चाहिए।

1.4.6 विशेष गुण वस्तुओं के उत्पादन की समस्या

जिन वस्तुओं/सेवाओं का उपभोग समाज के सदस्यों के लिए अत्यंत वांछनीय माना जाता है, उन्हें हम विशेष गुण पदार्थ कहते हैं। इन विशेष गुण पदार्थों की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि इनके उपभोग से न केवल इनका प्रयोगकर्ता लाभान्वित होता है बल्कि उपभोग न करने वालों को भी लाभ पहुँचता है। उदाहरण : यदि कोई

व्यक्ति सुशिक्षित और स्वस्थ है तो इससे पूरे समाज को कुछ न कुछ लाभ अवश्य पहुँचता है। इसी कारण शिक्षा और स्वस्थता को विशेष गुण सेवाएं कहा जाता है और यही वांछनीय माना जाता है कि समाज के सभी सदस्य सुशिक्षित एवं स्वस्थ हों। विशेष गुण पदार्थों का उपभोग सारे समाज को लाभ पहुँचाता है और उसके दक्षता और क्षेम के स्तर का उन्नयन करता है। अतः प्रत्येक समाज को यह निर्णय करना ही होगा कि यह किस सीमा तक ऐसे विशेष गुण पदार्थों का उत्पादन एवं उपभोग करेगा।

बोध प्रश्न 2

1) एक अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं बताइए।

....

....

....

2) पूँजी निर्माण क्या होता है?

....

....

....

3) उत्पादन की तकनीक किसे कहते हैं?

....

....

....

4) विशेष गुण पदार्थ किसे कहते हैं?

....

....

....

5) सार्वजनिक और निजी पदार्थों के बीच भेद स्पष्ट करें।

....

....

....

1.5 उत्पादन संभावना वक्र

अर्थव्यवस्था को विभिन्न वस्तुओं-सेवाओं के वैकल्पिक संयोजनों के बीच किसी एक का चयन करना होता है। इस चयन की समस्या को एक सरल चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। उसे हम **उत्पादन संभावना वक्र** या **उत्पाद-प्रत्यावर्तन वक्र** का नाम देते हैं। सामान्यतः एक उत्पादन संभावना वक्र की रचना इन मान्यताओं के आधार पर की जाती है:

i) अर्थव्यवस्था केवल दो वस्तुओं– एलईडी बल्ब (L) और कंप्यूटर मॉनीटर (M) के विभिन्न संयोजनों के बीच ही चयन करती है।

ii) अर्थव्यवस्था के उत्पादक संसाधनों का परिमाण पूर्व निश्चित है तथा उपलब्ध तकनीकी ज्ञान का स्तर भी स्थिर है।

iii) समाज के सभी संसाधनों का पूर्ण प्रयोग हो रहा है। कोई बर्बादी या अल्प प्रयोग नहीं हो रहा।

iv) उत्पादक संसाधन दोनों उत्पादों के निर्माण में काम आ सकते हैं। अतः उन्हें एक उद्योग से दूसरे में अंतरित किया जा सकता है। किंतु ऐसे अंतरण से एक उद्योग का उत्पाद घटेगा तथा दूसरे का उत्पादन अधिक हो जाएगा।

v) कोई संसाधन केवल एक उद्योग के लिए उपयोगी और दूसरे के लिए अनुपयोगी नहीं है।

vi) यहां हम संसाधनों की उत्पादन दक्षता को उत्पादों की भौतिक इकाइयों अर्थात् एलईडी बल्बों की संख्या तथा मॉनीटरों की संख्या द्वारा ही इंगित/मापित करते हैं।

इन मान्यताओं के आधार पर हम एक अर्थव्यवस्था के लिए संभावित उत्पादन संयोजनों का एक कृत्रिम उदाहरण तालिका 1.1 में दिखा रहे हैं। तालिका के आंकड़े बता रहे हैं कि यदि अर्थव्यवस्था अपने समस्त संसाधनों का प्रयोग करें तो वह 30 L या फिर 30 M का उत्पादन कर सकती है। वह L और M के इन्हीं सीमाओं के भीतर किसी संयोजन का उत्पादन भी कर सकती है। तालिका 1.1 की उत्पादन संभावनाओं को ही हमने चित्र 1.1 में अंकित किया है। यही हमारा उत्पादन संभावना वक्र (PPC) अथवा उत्पादन संभावना सीमा (PPF) है।

तालिका 1.1 : समाज को सुलभ उत्पादन संभावनाएं

संयोजन संख्या	LED (L)	कंप्यूटर मॉनीटर (M)	एक अतिरिक्त L के उत्पादन पर M की हानि (tones)	एक अतिरिक्त M के उत्पादन हेतु L की हानि
1	30	0	0	**0**
2	25	14	2.8	0.357
3	20	20	1.2	0.833
4	15	24	0.8	1.250
5	10	27	0.6	1.667
6	5	29	0.4	2.500
7	0	30	0.2	5.000

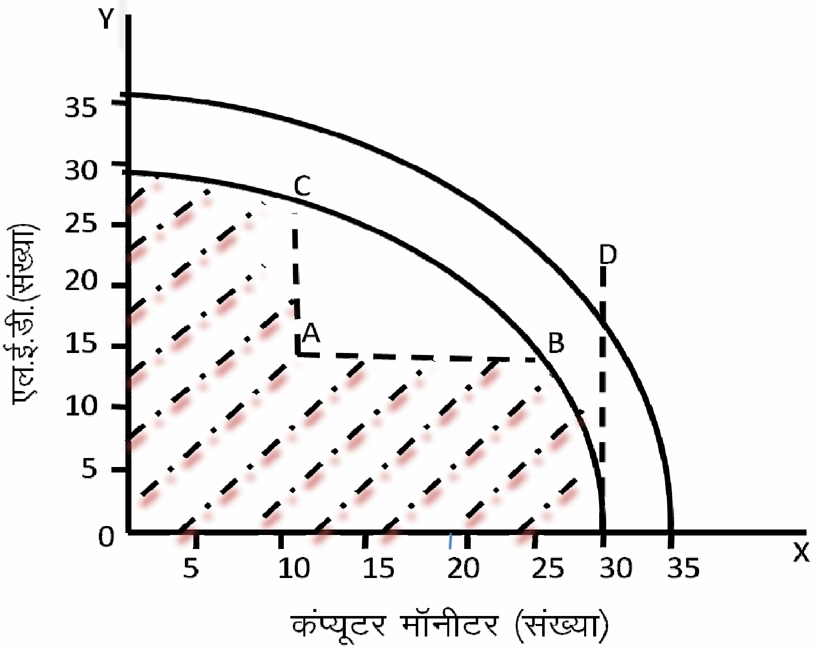

चित्र 1.1

हम यहाँ M की संख्या X-अक्ष पर दिखा रहे हैं और L की संख्या को Y-अक्ष पर दिखाया गया है। दोनों वस्तुओं के उत्पादन युग्मों को अंकित कर उनको जोड़कर बनाया गया वक्र ही उत्पादन संभावना वक्र है। इस प्रकार, हम PPC को उन सभी उत्पादन संयोजनों का समुच्चय मानते हैं जिन्हें समाज अपने सारे उत्पादक संसाधनों का पूर्ण एवं दक्ष प्रयोग करते हुए उत्पादन कर सकता है। अतः PPC वक्र का प्रत्येक बिंदु उन वस्तुओं की अधिकतम मात्राओं के एक संयोजन को दर्शाता है। इसीलिए इस वक्र को हम उत्पादन संभावना सीमा का नाम भी दे सकते हैं। अर्थव्यवस्था वक्र पर किसी भी बिंदु या उसके भीतर के छायांकित क्षेत्र में किसी भी बिंदु पर उत्पादन कर सकती है। उदाहरण के लिए, बिंदु A, B और C उन संयोजनों को दर्शाते हैं जिनका उत्पादन संभव है। ये या तो PPC पर हैं या छायांकित क्षेत्र में। लेकिन ध्यान दें : बिंदु A एक व्यावहारिक उत्पाद संयोजन तो है, किंतु इसे 'दक्ष' बिंदु नहीं माना जा सकता। दूसरी ओर, बिंदु B और C व्यावहारिक भी हैं और दक्ष भी। बिंदु A पर उत्पादन करते समय कुछ उत्पादक संसाधनों का या तो प्रयोग नहीं हो रहा या उनकी बर्बादी हो रही है।

अतः बिंदु A पर ही विचार करें। यहां 10 M तथा 14 L का उत्पादन हो रहा है। किंतु PPC दर्शा रहा है कि इतने M के साथ तो अर्थव्यवस्था 27 L का उत्पादन कर सकती है (बिंदु C)। या फिर 14 L के साथ M का उत्पादन बढ़ाकर 25 तक ले जाना संभव है (बिंदु B)।

PPC से परे (छायांकित क्षेत्र से बाहर) का प्रत्येक बिंदु L तथा M के ऐसे संयोजन दर्शाता है जिन्हें उत्पादित नहीं किया जा सकता। बिंदु D का ही उदाहरण लें; यह 30 M और 20 L का संयोजन दर्शाता है। किंतु 30 M का उत्पादन करने पर तो सारे संसाधनों का उपयोग हो, इसी उद्योग में हो जाता है। L के उत्पादन के लिए कुछ भी नहीं बचता। दूसरी ओर, यदि 20 L का उत्पादन करना ही है तो M का उत्पादन 30 नहीं बल्कि कम मात्रा अर्थात् 20 करना होगा।

उत्पादन संभावना वक्र PPC की विशेषताएं

सामान्यतः एक PPC में दो विशेषताएं होती हैं :

1) **यह बायीं से दाहिनी ओर ढलवां होता है**

इसका अर्थ है कि एक वस्तु की कुछ अधिक इकाइयों का उत्पादन करने के लिए दूसरी वस्तु के उत्पादन की कुछ इकाइयों का त्याग करना होगा (क्योंकि हमारे संसाधन तो सीमित हैं)।

2) **अक्ष केंद्र की ओर अवतल**

अक्ष केंद्र की ओर अवतल वक्र का ढाल वृद्धिमान होता है– यह ढाल ही सीमांत प्रत्यावर्तन दर (MRT) है। वस्तुतः हमारा PPC इसी मान्यता पर आधारित होता है।

क्या PPC एक सरल रेखा हो सकता है?

हाँ, यदि हम यह मानकर चलें कि MRT स्थिर है, अर्थात् ढाल अपरिवर्तित रहता है। यदि ढाल अपरिवर्तित हो तो वक्र एक सरल रेखा बन जाएगा। किंतु क्या MRT स्थिर रहेगा? यह तभी संभव होगा जब सभी संसाधन दोनों वस्तुओं के उत्पादन में एक समान दक्ष हों।

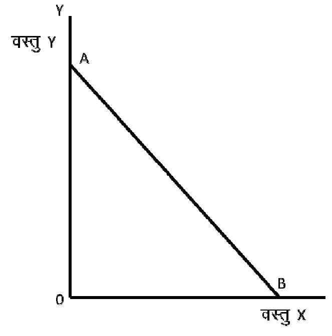

चित्र 1.2

हम सामान्यतः PPC को अक्ष केंद्र की ओर अवतल वक्र का रूप इसलिए देते हैं कि हमें यह मानकर चलना अधिक व्यावहारिक लगता है कि सभी साधन सभी चीज़ों का उत्पादन करने में एक जैसे दक्ष नहीं होते (चित्र 1.2)।

क्या उत्पाद केवल PPC पर ही होता है?

हाँ भी, नहीं भी। यदि सभी संसाधनों का दक्षतापूर्ण प्रयेग किया जाए तो हमारा उत्तर 'हाँ' होगा। किंतु यदि साधन प्रयोग में अदक्षता अथवा अपूर्णता– या दोनों ही उपस्थित हों तो उत्पादन किसी भीतरी बिंदु पर ही हो पाएगा (चित्र 1.3)। बिंदु F या PPC AD के किसी भी बिंदु पर संसाधन दक्षतापूर्वक संपूर्ण रूप से प्रयोग हो रहे हैं। किंतु वक्र से नीचे के U जैसे किसी भी बिंदु पर संसाधनों के प्रयोग में अपूर्णता या अदक्षता या दोनों ही विद्यमान होंगी। अतः PPC से नीचे किसी बिंदु पर उत्पादन समाज की अदक्षता और संसाधनों के प्रयोग में अपूर्णता की ओर संकेत करता है (चित्र 1.3)।

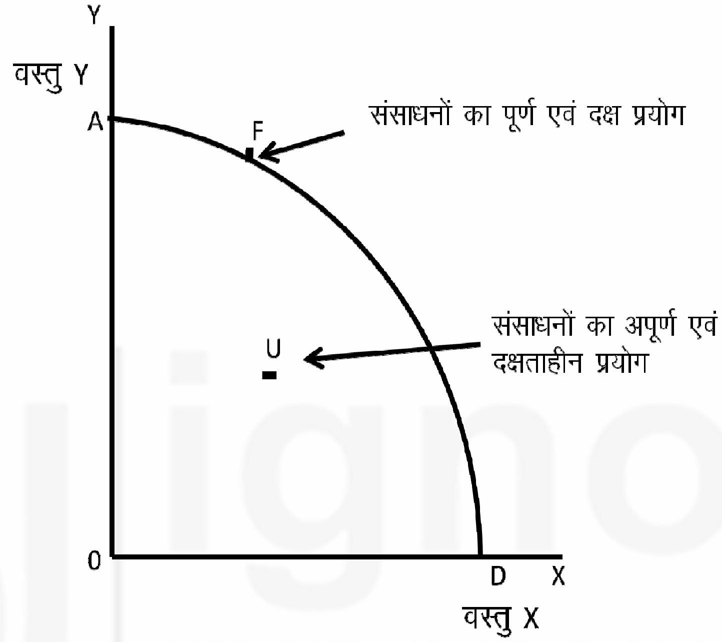

चित्र 1.3

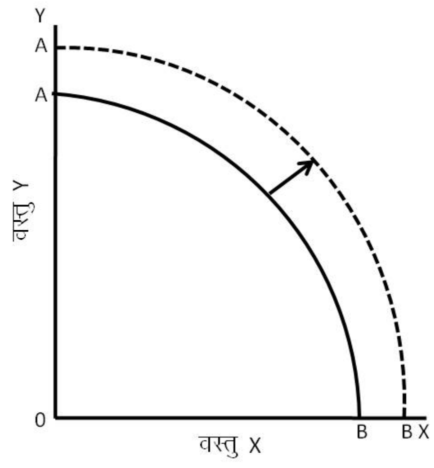

चित्र 1.4

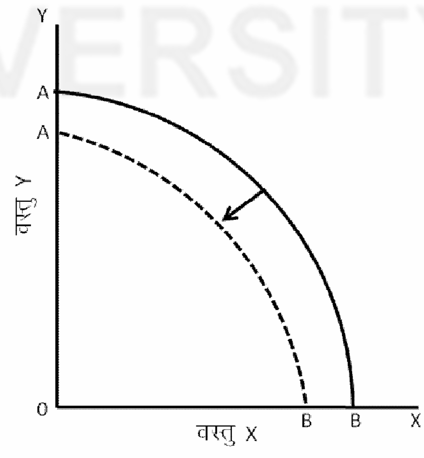

चित्र 1.5

क्या PPC वक्र में खिसकाव हो सकता है?

हाँ, यदि संसाधनों में वृद्धि हो, श्रम और पूँजी में वृद्धि और बेहतर प्रौद्योगिकी का संचार हो। इन सभी के सहारे अर्थव्यवस्था दोनों ही वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने में सफल हो सकती है। हमारी PPC की तो एक आधारिक मान्यता ही संसाधनों का पूर्व निश्चित आकार और प्रौद्योगिक ज्ञान का स्तर अपरिवर्तित रहना थी। यदि संसाधनों में वृद्धि होती है तो वह मान्यता भंग हो जाती है। पुराना PPC मान्य नहीं रहता। नए संसाधन भंडार के साथ तो एक नया PPC बनेगा जो पुराने PPC से बाहर स्थित होगा।

यदि संसाधनों के परिमाण में कमी हो जाए तो PPC भीतर (अक्ष केंद्र) की ओर खिसक जाएगा (प्राकृतिक आपदाएं और युद्ध जैसी घटनाएं जनसंख्या में कमी और पूँजी भंडार के विनाश के माध्यम से ऐसी स्थिति भी उत्पन्न कर सकती है) (चित्र 1.5)।

1.6 संसाधनों का आवंटन : केंद्रीय समस्याओं का समाधान

सैद्धांतिक रूप से दो प्रकार की ही अर्थव्यवस्थाएं हैं : पूँजीवादी और समाजवादी। वास्तविक व्यवहार में सभी देशों में ऐसी व्यवस्थाएं अपनाई गईं हैं जो पूँजीवाद एवं समाजवाद का एक मिश्रण लगती हैं।

संसाधन आवंटन की समस्या का समाधान कई विधियों से हो सकता है और प्रत्येक अर्थव्यवस्था अपने चुने हुए उद्देश्यों के अनुरूप इस समाधान का प्रयास करती है।

1.6.1 मिश्रित अर्थव्यवस्था में संसाधनों का आवंटन

एक मिश्रित अर्थव्यवस्था वह है जहां कुछ निर्णय तो बाज़ार की प्रक्रियाएं करती हैं और कुछ सरकारी नियमन या प्रत्यक्ष स्वामित्व के सहारे लिए जाते हैं।

आर्थिक गतिविधियों के कुछ क्षेत्र सरकार या सार्वजनिक क्षेत्र के लिए सुरक्षित रखे जाते हैं। सरकार उन कार्यों के लिए आवश्यक उत्पादक साधन अधिग्रहीत कर उनका अपनी वरीयताओं के अनुसार प्रयोग करती है। सार्वजनिक क्षेत्र के उत्पादन की रचना, उसके उत्पादन की कीमतों तथा अन्य उपायों का प्रयोग निजी क्षेत्र में उत्पादन हेतु संसाधन आवंटन को प्रभावित करने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। इन उपायों में सम्मिलित हैं– कीमत नियंत्रण, लाइसेंस प्रणाली, कराधान, साहाय्य (subsidies) आदि। साथ ही, सरकार अनेक श्रम-हितकारी उपाय भी लागू करती है। इसी प्रकार के कुछ उपाय देश के पिछड़े क्षेत्रों के विकास हेतु, विशिष्ट दुर्लभताओं (आपूर्ति की कमियों) को दूर करने तथा सारी अर्थव्यवस्था के संतुलित विकास के लिए भी अपनाए जाते हैं।

1.7 आर्थिक कार्यप्रणाली एवं आर्थिक नियम

आर्थिक कार्यप्रणाली तो अर्थशास्त्र के एक वैज्ञानिक स्वरूप का अनुशीलन करती (investigates) है। यह मान्यताओं के स्वरूप, तर्क विधाओं और अर्थ विज्ञान में की गई व्याख्याओं का अनुशीलन करती है। वर्गीकरण, वर्णन, व्याख्या, मापन, पूर्वाकलन, सुझाव और जाँच-आकलन आदि का संबंध आर्थिक कार्यप्रणाली से ही है। आर्थिक कार्यविधि अर्थव्यवस्था विषयक प्रश्नों के अर्थशास्त्रियों द्वारा दिए गए उत्तरों और व्याख्याओं के वर्गीकरण आदि के आधार की समीक्षा करती है। उदाहरण के लिए, प्रायः अर्थशास्त्री मांग एवं आपूर्ति वक्रों के खिसकाव (shifting) के माध्यम से यह व्याख्या करते हैं कि कीमतों में परिवर्तन क्यों हो रहे हैं। अर्थशास्त्र के एक सामाजिक विज्ञान होने के नाते आर्थिक नियम सामाजिक नियमों का एक अंग बन जाते हैं। अल्फ्रेड मार्शल के शब्दों में हमें समाज के सदस्यों के व्यवहार के उस पक्ष को अलग रखना चाहिए जहाँ मनुष्य की संप्रेरणा आर्थिक हो, जहां उन मुख्य संप्रेरणाओं की अभिव्यक्ति किसी मौद्रिक कीमत द्वारा हो सके। इनसे संबंधित कार्य सहज ही आर्थिक गतिविधियां बन जाएंगे। किंतु आर्थिक एवं शेष सामाजिक नियमों के बीच इस प्रकार का विलगाव प्रायः इतना सहज स्पष्ट नहीं होता। कितनी ही बार किसी कार्य के साथ आर्थिक एवं गैर-आर्थिक संप्रेरणाएं एक साथ जुड़ी होती हैं। परिणामस्वरूप ऐसे विशुद्ध आर्थिक नियमों की रचना कर पाना बहुत कठिन हो जाता है जो संपूर्ण वैधता से परिपूर्ण भी हों।

1.7.1 आगमनात्मक एवं निगमनात्मक तर्क

अर्थशास्त्रियों ने अपने नियमों के निरूपण में दो परंपराओं का अनुसरण किया है। एक परंपरा में 'कारण' (इन्हें शर्तं या मान्यताएं भी कहा जाता है) पूर्व निर्दिष्ट होते हैं और सभी आर्थिक इकाइयों से विवेकपूर्ण (तर्कसंगत) व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। यदि

मान्यताओं का अनुपालन हो तो इस परिदृश्य में परिणाम पूर्वाकलनीय ही रहते हैं। मान्यताएं पूरी तरह अविश्वसनीय भी हो सकती हैं या बहुत ही वास्तविकतापूर्ण भी, किंतु उन्हें बहुत ही सटीक रूप से निरूपित किया जाता है। इस प्रकार की तर्कधारा को निगमनात्मक तर्कधारा कहा जाता है। यहां सामान्यीकरणों या नियमों तथा व्यक्तियों की गतिविधियों से तर्कधारा के साथ संगतिपूर्णता की अपेक्षा की जाती है। इसका एक सहज उदाहरण मांग का नियम है, जिसके अनुसार, अन्य बातें पूर्ववत् रहने पर किसी वस्तु की मांग की मात्रा में उसकी कीमत के विलोमार्थी परिवर्तन होते हैं। जब कीमत गिरती है तो मांग की मात्रा अधिक हो जाती है और कीमत में वृद्धि होने पर कम मात्रा की मांग की जाती है।

इसके विपरीत कुछ अर्थशास्त्री एक-दूसरे ही ढंग से आर्थिक नियमों का अन्वेषण करते हैं। काल्पनिक आधार पर कारणों या शर्तों का निरूपण करने के स्थान पर वे विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न आर्थिक इकाइयों द्वारा किए गए व्यवहार की वास्तविक जानकारी एकत्र करते हैं। इसके बाद विभिन्न परिस्थितियों के अंतर्गत उनके व्यवहार का 'सामान्यीकरण' किया जाता है। इसे हम आगमनात्मक तर्कधारा का नाम देते हैं। इस विधि का एक बहुचर्चित उदाहरण एंजेल का नियम है। विभिन्न परिवारों के बजट के अध्ययन के आधार पर एजेंल का निष्कर्ष है कि जैसे-जैसे परिवार की आय में वृद्धि होती है, आवश्यकताओं पर उसका व्यय कम होने लगता है और विलासितापूर्ण उपभोग पर व्यय में वृद्धि होती है। अधिकांश व्यवसायी फर्में इसी प्रकार की विश्लेषण विधि को बेहतर समझती हैं।

अर्थशास्त्र में किसी भी अर्थव्यवस्था और उसकी कार्यप्रणाली विषयक हमारी सोच और सूझबूझ को बढ़ाने के लिए हम आगमनात्मक एवं निगमनात्मक दोनों ही तर्कधाराओं का प्रयोग करते हैं।

1.7.2 संतुलन

संतुलन की संकल्पना आर्थिक विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण उपस्कर (tool) है। इसका बहुत प्रयोग होता है। अतः इसे समझ लेना आवश्यक है। प्रायः एक आर्थिक चर (उदाहरण, किसी वस्तु/संसाधन की कीमत) पर अनेक शक्तियों का प्रभाव रहता है– वे उस चर को अपनी-अपनी दिशा की ओर खींचने का प्रयास करती हैं। जब वे शक्तियाँ एक संतुलन को प्राप्त कर लेती हैं, अर्थात् उक्त चर का मान स्थिर हो जाता है तो हम कहते हैं कि वह चर संतुलन की अवस्था में है।

संतुलन की संकल्पना

संतुलन का अर्थ है विश्राम, अर्थात् एक ऐसी अवस्था में पहुँच जाना जहां से दूर होने की कोई प्रेरणा या सुयोग नहीं होता :

- जिस समय विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं पर व्यय से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो रही हो तो हम कहेंगे कि उपभोक्ता संतुलन की स्थिति में है। उसका कोई प्रयास उसकी संतुष्टि के स्तर को सुधार नहीं पाएगा, संभवतः कुछ संतुष्टि की क्षति भले ही हो जाए।

- इसी प्रकार, एक व्यावसायिक फर्म उस समय संतुलन प्राप्त करेगी जब उसका संसाधनों पर व्यय और उत्पादन उसे अधिकतम लाभ प्राप्त करा रहे हों। यदि उसका ध्येय अधिकतम लाभ कमाना है तो इस संतुलन बिंदु से परे हटने पर उसे लाभ में कमी सहन करनी होगी।

- कोई संसाधन स्वामी उस समय संतुलन में होता है जब उसके संसाधन उच्चतम प्रतिप्राप्ति वाले काम में लगे हों और उसकी अपनी आय अधिकतम स्तर पर हो। यहां भी किसी अन्य कार्य की ओर संसाधन की एक भी इकाई को प्रेरित करने से आय में कमी सहन करनी पड़ेगी।

- एक अर्थव्यवस्था उस समय संतुलन में होती है जब उसकी आय (और रोज़गार) के स्तर ऐसे हों जहां सकल मांग और सकल आपूर्ति एकसमान हो जाते हैं।

संतुलन विषयक ये विचार इसलिए महत्त्वपूर्ण नहीं है कि इन द्वारा इंगित संतुलन कभी प्राप्त होता है। इनका महत्त्व इसी बात में है कि ये उस दिशा की ओर संकेत करते हैं जिसकी ओर आर्थिक गतिविधियां प्रवृत्त होती हैं। प्रायः आर्थिक इकाइयां असंतुलन से संतुलन की ओर अग्रसर होती हैं।

'संतुलन' का निरूपण/विश्लेषण दो स्तरों पर किया जा सकता है :

1) **आंशिक संतुलन** : यहां हम शेष अर्थव्यवस्था से अलग-थलग रहते हुए केवल एक बाज़ार की स्थिति का आकलन करते हैं।

2) **सामान्य या व्यापक संतुलन** : यहां हमारी मान्यता रहती है कि सभी बातें/चर परस्पर निर्भर हैं और हम सभी बाज़ारों में समन्वित रूप से प्राप्त संतुलन पर चर्चा करते हैं।

1.8 यथार्थमूलक बनाम आदर्शमूलक अर्थशास्त्र

यथार्थवादी (positive) अर्थशास्त्र केवल वास्तविकता का निरूपण करने वाले नियमों से जुड़ा है। ये नियम सैद्धांतिक मान्यताओं के माध्यम व्युत्पन्न हो सकते हैं। ये दर्ज किए गए अवलोकित तथ्यों पर भी आधारित हो सकते हैं। ये हमें यही बता पाते हैं कि स्थिति क्या है? इनसे यह नहीं पता चल पाता कि आर्थिक विश्लेषण के परिणाम समाज/व्यक्ति के लिए वांछनीय हैं या नहीं, अथवा क्या इनमें किसी परिवर्तन की आवश्यकता है।

इसके विपरीत आदर्शमूलक (normative) अर्थशास्त्र इसी तथ्य की अनुभूति के साथ कार्य करता है कि अर्थव्यवस्था कभी 'संपूर्ण' नहीं होती। इसके क्रियाकलापों के परिणामों में और सुधार की संभावना बनी रहती है। प्रायः सभी अर्थव्यवस्थाओं में तुरंत ध्यान दिए जाने की गुहार लगाती अनेक समस्याएं विद्यमान होती हैं। इन समस्याओं का नाता कीमतों के परिवर्तनों, रोज़गार, कतिपय आगतों की दुर्लभता, आय एवं धन की अपर्याप्तता आदि से हो सकता है। आदर्शमूलक अर्थशास्त्र में उद्भूत ज्ञात का प्रयोग अर्थव्यवस्था की कार्यप्रणाली को सुधारने में किया जाता है। इस सुधार के लक्ष्य निर्धारित कर उन्हें प्राप्त करने के लिए उपर्युक्त नीतियों की रचना की जाती है। अतः आदर्शमूलक अर्थशास्त्र का संबंध इस बात से है कि अर्थव्यवस्था में क्या कुछ होना चाहिए।

एक यथार्थ-सूचक कथन :
''पैट्रोल की कीमत में वृद्धि से इसकी मांगी गई मात्रा में कमी होती है।''

एक आदर्श सूचक कथन :
''सरकार को पैट्रोल की खपत कम करने के लिए कदम उठाने चाहिए। प्रायः आदर्शसूचक कथनों में 'चाहिए' जैसी क्रिया जुड़ी होती है।''

1.9 व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र

उपर्युक्त व्यष्टि और समष्टि शब्द मुख्यतः यह बताते हैं कि विश्लेषण की इकइयों का स्तर कितना विशाल है। एक ओर विश्लेषण किसी एक इकाई के व्यवहार और प्रतिक्रियाओं पर केंद्रित हो सकता है तो दूसरी ओर समस्त अर्थव्यवस्था पर एक साथ विचार किया जा सकता है। इन शब्दों में, व्यष्टि और समष्टि के अंग्रेज़ी समतुल्यों का मूल स्रोत क्रमशः ग्रीक भाषा के शब्द माइक्रोस और मैक्रोस को माना जाता है, जिनका अभिप्राय छोटे तथा बड़े से होता है।

व्यष्टि अर्थशास्त्र का संबंध अर्थव्यवस्था में विभिन्न इकाइयों के व्यक्तिगत व्यवहार, किसी एक वस्तु की कीमत का निर्धारण, एक उपभोक्ता या एक उत्पादक के व्यवहार आदि से होता है।

इसके विपरीत समष्टि अर्थशास्त्र बड़े विशाल समुच्च्यों या आर्थिक इकाइयों के उन समूहों पर विचार करता है जो समस्त अर्थव्यवस्था व्यापी भी हो सकते हैं। केन्नेथ बॉल्डिंग के शब्दों में **''समष्टि अर्थशास्त्र' विशाल समुच्च्यों और अर्थतंत्र के औसत मानों से संबंधित रहता है, किन्हीं व्यक्ति स्तरीय आंकड़ों से नहीं।''** यहाँ हम चरों और आर्थिक इकाइयों के समूहों, जैसे कि राष्ट्रीय आय, रोज़गार, सामान्य कीमत स्तर, वस्तुओं-सेवाओं के अंतर्क्षेत्रीय प्रवाहों, सकल बचत व निवेश आदि पर विचार करते हैं। **जहाँ एक उद्योग या एक फर्म का व्यवहार व्यष्टि अर्थशास्त्र के अंतर्गत रहता है वहीं समष्टि अर्थशास्त्र की विषयवस्तु एक समूचे क्षेत्रक से संबंधित होती है।**

एक उपमान के रूप में चर्चा करें तो समष्टि अर्थशास्त्र हाथी को एक इकाई मानता है किंतु व्यष्टि अर्थशास्त्र में तो दंतकथा के दृष्टिहीन पाँच विद्वानों की भांति उसके शरीर के विभिन्न अंगों पर ही चर्चा करना पर्याप्त रहता है। इस प्रकार के अंग अनुसार विश्लेषण के परिणाम अवश्य अलग-अलग रहते हैं। यदि एक अन्य उपमान की बात करें तो स्टेडियम में बैठा दर्शक व्यक्ति क्रिकेट मैच का समष्टि दृश्य देख पाता है किंतु टेलीविज़न के सामने बैठकर तो एक-एक बॉल का विवरण ही मिल पाता है।

1.10 स्टॉक (भण्डार) एवं प्रवाह

आर्थिक चरों के दो प्रकार होते हैं : (1) स्टॉक, और (2) प्रवाह। **स्टॉक चर का मापन समय की एक इकाई पर उसका मान दिखाता है, किसी समयावधि के दौरान नहीं। दूसरी ओर, प्रवाह चर का मापन किसी अवधि भर के लिए होता है किसी समय बिंदु पर नहीं।** हम अनेक आर्थिक चरों से परिचित हैं जो इनमें से पहले या दूसरे वर्ग में होते हैं। ज़रा मुद्रा की आपूर्ति और धन के परिमाण पर विचार करें। दोनों का संबंध समय बिंदु से होता है। अतः ये स्टॉक सूचक संकल्पनाएं हैं। दूसरी ओर, उत्पादन, बचत, व्यय, आय, विक्रय, क्रय आदि पर ध्यान दें। इन सभी का मापन किसी न किसी अवधि से जुड़ा रहता है। एक फैक्ट्री का उत्पादन एक सप्ताह या महीने की अवधि में मापा जाता है, किसी क्षण भर में नहीं। व्यक्ति की आय किसी समय बिंदु पर नहीं मापते। वह भी किसी अवधि के साथ ही मापित होती है। एक प्रवाह चर का मान समय व्यतीत होने के साथ ही निश्चित रूप या आकार धारण करता है। हाँ, एक और बात का ध्यान रखना चाहिए : प्रायः आर्थिक विश्लेषण में स्टॉक और प्रवाह चरों का साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

1.11 स्थैतिकी एवं गत्यात्मकता

आर्थिक विश्लेषण में एक स्थैतिक परिवेश या फिर गत्यात्मक परिवेश का प्रयोग हो सकता है। इन स्थैतिक एवं गत्यात्मक विश्लेषण विधाओं में अनेक प्रकार से भेद किया जा सकता है। एक परिभाषा के अनुसार, स्थैतिकी सिद्धांत में (कारण-प्रभाव) चरों की तिथियाँ नहीं बताई जातीं। बाज़ार के व्यवहार का सामान्य मांग-आपूर्ति प्रतिमान ऐसा ही एक सिद्धांत है। यहां मांग और आपूर्ति अपनी-अपनी कीमतों पर निर्भर रहते हैं और संतुलन की शर्त है कि मांग आपूर्ति के समान होती है। किसी भी चर के लिए किसी समय बिंदु या अवधि की कोई चर्चा नहीं की जाती। इस विचार के अनुसार एक गत्यात्मक प्रतिमान वह होगा जहां चरों की संबद्ध तिथियां दर्शाई गई हों। इस दृष्टि से मांग एवं आपूर्ति प्रतिमान का परिवर्तित गत्यात्मक स्वरूप होगा :

$$D_t = f(P_t)$$

$$S_t = g(P_t)$$

$$D_t = S_t$$ जहाँ ‘t’ समय की संबद्ध इकाई है।

किंतु कुछ अर्थशास्त्रियों का आग्रह है कि केवल चरों के तिथि मान बताने भर से प्रतिमान गत्यात्मक स्वरूप धारण नहीं कर पाएगा। यहां तो चरों के तिथि संबद्ध होने के साथ-साथ उनके संबंधों में समयांतराल की उपस्थिति भी आवश्यक मानी जाती है। इस कसौटी के अनुसार, एक गत्यात्मक प्रतिमान कुछ इस प्रकार होगा :

$$D_t = f(P_t)$$

$$S_t = g(P_{t-1})$$

$$D_t = S_t$$

यहाँ मांग फलन में समयांतराल नहीं है– 't' अवधि में मांग, D_t अपनी उसी अवधि की कीमत, पर निर्भर करती है। किंतु आपूर्ति फलन में एक अंतराल है। यही प्रतिमान को गत्यात्मक बनाता है। पिछली अवधि (t–1) के कीमत स्तर से प्रभावित होकर ही उत्पादक अपना उत्पादन अधिक या कम करने का विचार करते हैं। ऐसे निर्णय का संपूर्ण प्रभाव अवधि 't' में ही फलीभूत होता है। हाँ, बाज़ार का संतुलन वहीं होगा जहाँ 't' समय में माँग वस्तु की उसी अवधि की आपूर्ति के समान हो।

बोध प्रश्न 3

1) बताएं कि ये कथन सत्य (T) हैं या असत्य (F) :

   i) यथार्थमूलक अर्थशास्त्र का संबंध 'क्या होना चाहिए' से है।

   ii) गुणमूलक अर्थशास्त्र में नीतिगत कदम सुझाने के लिए कुछ 'जीवन मूल्य व्यवस्था' की आवश्यकता रहती है।

   iii) किसी भी आर्थिक समस्या के लिए प्रत्येक अर्थशास्त्री एक ही समाधान सुझाता है।

   iv) यथार्थ सूचक अर्थशास्त्र सदैव वस्तु स्थिति को ही दर्शाता है।

   v) हम सदैव ही व्यष्टि अर्थशास्त्र के निष्कर्षों को समष्टि अर्थशास्त्र में प्रभावी मान सकते हैं।

   vi) मांग और आपूर्ति, दोनों ही स्टॉक चर हैं।

   vii) तुलनात्मक स्थैतिकी में दो संतुलन स्तरों की तुलना की जाती है।

2) प्रथम स्तंभ (क) की मदों का द्वितीय स्तंभ (ख) की मदों के साथ मिलान करें।

स्तंभ 'क'	स्तंभ 'ख'
i) एक फर्म और एक उद्योग का अध्ययन	क) वस्तु विनियम
ii) एक चर का मापन एक समय बिंदु पर होता है	ख) समष्टि अर्थशास्त्र
iii) अर्थव्यवस्था के एक समूचे क्षेत्र का अध्ययन	ग) सीमांत उपयोगिता
iv) एक समयावधि पर मापनीय चर	घ) अन्य बातें स्थिर रहें (Ceteris paribus)
v) किसी वस्तु की आवश्यकता संतुष्ट करने की क्षमता	ङ) प्रवाह चर
vi) एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग से प्राप्त संतुष्टि	च) व्यष्टि अर्थशास्त्र
vii) अन्य बातें स्थिर रहने पर	छ) उपयोगिता
viii) सेबों का अंडों से विनिमय	ज) स्टॉक चर

3) यदि ऐसी नई तकनीक विकसित होती है जो कृषि उत्पादकता में वृद्धि कर देती है तो नई उत्पादन संभावना सीमा वक्र निम्न में से कौन सा होगा?

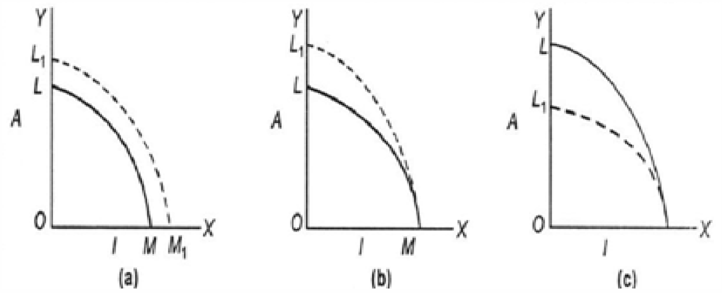

चित्र 1.6

1.12 सार-संक्षेप

अर्थशास्त्र उपभोक्ता, उत्पादक, परिवार, फर्मों, सरकारों तथा देश को दुर्लभता की समस्या का सामना करने संबंधी व्यवहार की व्याख्या करता है। दुर्लभता का अभिप्राय अपरिमित आवश्यकताओं और संसाधनों की सीमित उपलब्धता से है। यह दुर्लभता ही तीन केंद्रीय समस्याओं की जननी है। क्या उत्पादन करें, कैसे उत्पादित करें और किसके लिए उत्पादित करें? इन्हीं समस्याओं से संबद्ध अन्य समस्याएँ हैं : संवृद्धि की समस्या, सार्वजनिक एवं निजी पदार्थों में चयन की समस्या और विशेष गुण पदार्थों के उत्पादन की समस्या। अतः किसी व्यक्ति या समाज की केंद्रीय समस्या यही है कि वैकल्पिक स्पर्धाशील लक्ष्यों की पूर्ति के लिए दुर्लभ संसाधनों का आवंटन किस प्रकार करें। एक उत्पादन संभावना वक्र सीमित संसाधन एवं वर्तमान प्रौद्योगिकी के आधार पर यह दर्शाता है कि एक वस्तु का उत्पादन स्तर निश्चित रख दूसरी का कितना (अधिकतम) उत्पादन किया जा सकता है। यह दर्शाता है कि एक वस्तु का दूसरी में, भौतिक नहीं बल्कि संसाधन प्रयोग के अंतरण द्वारा प्रत्यावर्तन किया जा सकता है।

आर्थिक कार्यविधि अर्थशास्त्र के एक विज्ञान स्वरूप का अन्वेषण करती है। आर्थिक नियम हमें किसी घटनाक्रम की कारणों और प्रभावों के रूप में व्याख्या करने में समर्थ बनाते हैं। आर्थिक नियमों के निरूपण में दो तर्कधाराओं का प्रयोग होता है— आगमनात्मक एवं निगमनात्मक।

'संतुलन' आर्थिक विश्लेषण का एक महत्त्वपूर्ण उपस्कर है। जब किसी चर को विभिन्न दिशाओं में खींच रही शक्तियां परस्पर संतुलित हो जाती हैं, उस चर का स्थान अपरिवर्तित रहता है, तो हम उस चर को संतुलन में मानते हैं।

यर्थाथमूलक शब्द आर्थिक विश्लेषण की वह सैद्धांतिक तर्कधारा दर्शाते हैं जहाँ केवल वस्तु स्थिति का वर्णन किया जाता है। इसमें परिणामों की वांछनीयता पर विचार नहीं किया जाता। दूसरी ओर, गुणमूलक अर्थशास्त्र का संबंध ही इस बात से है कि क्या होना चाहिए। यह समाज द्वारा चुने गए लक्ष्यों की दृष्टि से वस्तु स्थिति पर चिंतन कर उन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्यविधियां सुझाता है।

व्यष्टि अर्थशास्त्र आर्थिक इकाइयों की व्यक्तिगत या छोटे समूहगत आर्थिक गतिविधियों और प्रतिक्रियाओं का अध्ययन कराता है। समष्टि अर्थशास्त्र का संबंध आर्थिक इकाइयों के विशाल समूहों, उनके समुच्चयों और औसतों तथा राष्ट्रीय आय, रोज़गार आदि चरों के साथ होता है।

आर्थिक चरों को हम स्टॉक और प्रवाह के वर्गों में भी विभाजित कर सकते हैं। स्टॉक चर का मापन किसी समयबिंदु पर होता है, जबकि प्रवाह चर किसी अवधि के लिए मापनीय होते हैं। आर्थिक स्थैतिक या तुलनात्मक स्थैतिकी की विश्लेषण तकनीकें अर्थव्यवस्था के प्राचलों का मान पूर्व-निर्धारित मानती हैं। अन्य बातें स्थिर रहने की

मान्यता बनाकर यहां हम प्रारंभिक और अंतिम संतुलन अवस्थाओं की तुलना करते हैं। आर्थिक गत्यात्मिकता में उन प्राचलों के मान भी परिवर्तनीय माने जाते हैं।

1.13 संदर्भ ग्रन्थादि

1) Case, Karl E. and Ray C. Fair, *Principles of Economics*, Pearson Education, New Delhi, 2015.

2) Stiglitz, J.E. and Carl E. Walsh, *Economics*, Viva Books, New Delhi, 2014.

3) Hal R. Varian, *Intermediate Microeconomics: A Modern Approach*, 8th edition, W.W. Norton and Company/Affiliated East-West Press (India), 2010.

1.14 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) अपरिमित, सदैव वृद्धिशील

2) संसाधनों और आवश्यकताओं के बीच एक मौलिक एवं स्थायी असंतुलन की समस्या का समाधान करने के लिए गढ़ी गई संरचना को अर्थव्यवस्था कहते हैं।

3) (ग)

बोध प्रश्न 2

1) अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं हैं – (i) क्या उत्पादन करें; (ii) कैसे उत्पादित करें; (iii) किसके लिए उत्पादन करें; (iv) संवृद्धि की समस्या; (v) सार्वजनिक एवं निजी पदार्थों के बीच चयन की समस्या, और (vi) विशेष गुण पदार्थों के उत्पादन की समस्या।

2) पूँजी के भंडार में वृद्धि ही पूँजी निर्माण है।

3) उत्पादन तकनीक का अर्थ है, वस्तु के उत्पादन में प्रयुक्त आदानों के बीच सटीक अनुपात।

4) विशेष गुण पदार्थों के हितलाभ उनके उपभोक्ताओं के साथ-साथ गैर-उपभोक्ताओं को भी प्राप्त होते हैं।

5) निजी पदार्थों की सुलभता कुछ व्यक्तियों तक सीमित रहती है जबकि सार्वजनिक पदार्थों का सर्वसुलभ माना जाता है।

बोध प्रश्न 3

1) i) असत्य ii) सत्य iii) असत्य

iv) असत्य– यह तभी वस्तु स्थिति दर्शाएगा जब इसकी मान्यताएं विश्वास योग्य/व्यावहारिक हों, अन्यथा यह केवल सही तर्क रहेगा। इसके काम आ सकने वाले निष्कर्ष नहीं निकलेंगे।

v) असत्य vi) असत्य vii) सत्य

2) i) च ii) ज iii) ख iv) ङ v) छ vi) ग vii) घ viii) क

3) b)

1.15 पाठांत प्रश्न

1) एक अर्थव्यवस्था क्या होती है? अर्थव्यवस्था की केंद्रीय समस्याएं बताइए।

2) मानवीय आवश्यकताओं के मुख्य लक्षण बताइए।

3) प्रत्येक आर्थिक समस्या के मूल में दुर्लभता ही होती है– व्याख्या करें।

4) उत्पादन के कारक/संसाधन से क्या अभिप्राय है? सभी चारों कारकों की संक्षेप में व्याख्या करें।

5) इन पर लघु टिप्पणियाँ लिखें –

   क) सार्वजनिक पदार्थ और निजी पदार्थ

   ख) विशेष गुण पदार्थ

   ग) मानवीय आवश्यकताएं

6) समझाइए कि अर्थव्यवस्था की मूलभूत समस्याओं के समाधान किस प्रकार परस्पर संबंधित हैं?

7) उत्पादन संभावना वक्र की संकल्पना समझाइए। इसकी मान्यताएं बताइए। एक उदाहरण की सहायता से अपना उत्तर स्पष्ट करें।

8) संक्षेप में समझाइए कि निम्नलिखित अर्थतंत्रों में संसाधन आवंटन कैसे किया जाता है?

   क) बाज़ार व्यवस्था

   ख) समाजवादी अर्थव्यवस्था

   ग) मिश्रित अर्थव्यवस्था

9) कारण बताते हुए स्पष्ट करें कि इनमें से कौन-से कथन सत्य हैं तथा कौन से असत्य–

   क) सभी मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि नहीं हो सकती। यह तो सार्वभौमिक सत्य है। तो फिर उनकी संतुष्टि के गंभीर प्रयास क्यों किए जाते हैं?

   ख) केवल दुबई जैसे संसाधन समृद्ध देश को चयन की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता।

   ग) देश की श्रम शक्ति एवं कार्यशक्ति के बीच का अंतर बेरोज़गारों की संख्या है।

   घ) कोलकाता स्थिति राष्ट्रीय पुस्तकालय एक सार्वजनिक पदार्थ का सटीक उदाहरण है।

   ङ) महानगर टेलीफोन निगम/भारत संचार निगम एक निजी पदार्थ का ही उत्पादन करते हैं।

10) यर्थाथमूलक और गुणमूलक अर्थशास्त्र में भेद करें। किसको वरीयता मिलनी चाहिए? क्यों?

11) इन पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखें –

   क) संतुलन की अवधारणा

   ख) आर्थिक नियमों की सीमाएं

   ग) अन्य बातें स्थिर रहने पर

   घ) परिवर्तन पथ को अंकित करना

12) इनमें भेद स्पष्ट करें –

   क) व्यष्टि अर्थशास्त्र और समष्टि अर्थशास्त्र

   ख) स्थैतिक और गत्यात्मक अर्थशास्त्र

13) वे कारण बताइए जो प्रायः सभी आधुनिक अर्थव्यवस्थाओं को गत्यात्मक बना देते हैं।

14) एक उपभोक्ता, उत्पादक, निवेशक और एक उत्पादक संसाधन के समक्ष अवसर लागतें क्या स्वरूप धारण करती हैं?

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY